# वैदिक सृष्टिविज्ञान का विवेचक ग्रन्थ : एक समीक्षण

**महामहोपाध्याय देवर्षि कलानाथ शास्त्री (राष्ट्रपति सम्मानित)**

वेदों में ब्रह्माण्डविज्ञान, सृष्टिविज्ञान आदि के वैज्ञानिक तथ्य विवेचित है यह बात आज के आधुनिकतम वैज्ञानिकों ने भी मानी है। वेदविज्ञान पर विस्तृत, प्रणालीबद्ध और सर्वाङ्गीण विवेचन प्रस्तुत करने वाली ग्रन्थावली सर्वप्रथम जयपुर के वेदमनीषी पं. मधुसूदन ओझा ने बीसवीं सदी के प्रारंभ में लाखों पृष्ठों में शतशः ग्रन्थों द्वारा प्रसारित की जिसका अनुवर्तन म.म.पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, पं. मोतीलाल शास्त्री, कर्पूरचन्द्र कुलिश, सुरजनदास स्वामी आदि जयपुर के विद्वानों ने ग्रन्थ लिखकर किया। आज भी डॉ. अनन्त शर्मा, डॉ. दयानन्द भार्गव, गणेशीलाल सुथार आदि वेदविज्ञान पर कार्यरत हैं। जयपुर के देश विख्यात पत्रकार, अंग्रेजी पत्रकारिता के शिखर पुरुष, वेद मनीषी श्री ऋषिकुमार मिश्र (1932-2009) ने दिल्ली में रहते हुए अनेक वर्षों के मन्थन के बाद वेदविज्ञान के समूचे सिद्धान्तों के निष्कर्षों पर एक विश्व कोषात्मक अंग्रेजी ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसका अध्ययन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसी का एक समीक्षण यहां प्रस्तुत है।

Before the Beigning and after the End नामक ग्रन्थ उसी लेखक के सुदीर्घ अध्ययन, मनन और निदिध्यासन का विवेक संमत निष्कर्षों के साथ परिमार्जित और परिपक्व शैली में, सुदृढ़ और परिष्कृत अंग्रेजी भाषा में प्रस्तुत बहुआयामी भारतीय विद्या और वेदविज्ञान की अन्तर्दृष्टि का ज्ञान कोष है जिसने पहले तो एक लम्बे कालखंड में अंग्रेजी और हिन्दी पत्रकारिता में विपुल कीर्तिमान बनाए फिर पारंगत मनीषियों के सान्निध्य में प्राच्य विद्याओं का अध्ययन किया, देश की राजनीति में भी एक जननेता के रूप में भाग लिया और अन्त में समूचे अध्ययन और मनन का निष्कर्ष सुगठित तथा सारगर्भित शैली में नवनीत के रूप में संजोकर इन छह (6) सौ पृष्ठों में रख दिया। अंग्रेजी के पाठक इसे देखते ही समझ जाएँगे कि इसकी भाषा परिमार्जित और विशुद्ध है, ज्ञान-विज्ञान के निष्कर्ष प्रस्तुत करने की शैली भी परिपक्व है।

**ईश्वर** - वैदिक विज्ञान के अनेक शब्द ऐसे हैं जिनका सर्वांगपूर्ण पर्याय अंग्रेजी में बनाना संभव नहीं है। ऐसे स्थलों पर लेखक ने मूल संस्कृत शब्द लिखकर उसका अन्तर्निहित अर्थ स्पष्ट किया है। जिस संदर्भ में जिस शब्द की जो अर्थछाया अंग्रेजी में बनती है वह बताई है। अलग अलग संदर्भो में अनेक शब्दों के अलग अलग पर्याय होंगे ही। इसका एक दिलचस्प उदाहरण लेखक ने प्रथम अध्यय में ही स्पष्ट कर दिया है कि ईश्वर जैसे शब्द का भी अब तक पूरी तरह सही पर्याय नहीं आ पाया है। लेखक के शब्द हैं

The word 'Ishwara' has been rendered into English as 'God' Sir Monier Monier Williams translates Ishwara as master, lord, prince and God. The supreme Being. Such a translation is one of many examples of the superimposition of their own reli gious and mental constructs on the Vedas by Christain commentators. (P.10). जहाँ लेखक ने सृष्टि विद्या के प्रसंग में ईश्वर का विवेचन किया है वहाँ मूल शब्द देकर ही पर्याय दिया है, वहाँ वह प्रजापति है। जहाँ जीव, ईश्वर और परमेश्वर के रहस्यों का विवेचन है वहाँ मूल शब्द ही प्रयुक्त है। इसी प्रकार आत्मा का पर्याय Soul सब जगह सही थौड़े ही बैठ सकता है। ऐसे सभी अवसरों पर मूल शब्द देकर तात्पर्य स्पष्ट किया गया है जैसे कहीं आत्मा Soul है, आत्मा Body है पर अन्यत्र आत्मा Body के अर्थ में भी मिल जाएगा। (पृ. 69) यही कारण है कि अन्य पुस्तकों की तरह इसमें परिशिष्ट के रूप में Glossary या पर्यायसूची (अंग्रेजी से संस्कृत) देने की नौबत नहीं आई। वह आवश्यक थी ही नहीं। विवेचन सभी स्थलों पर सांगोपांग और स्वतः पूर्ण है। यह इस ग्रन्थ की एक विशेषता है। इससे वेद विज्ञान के रहस्यों के अवगम में भ्रान्ति की संभावना नहीं रहती अन्यथा अनेक ऐसे शब्द हैं जिनके पर्याय प्रयुक्त हों तो भ्रान्तियों की बाढ़ आ जाए जैसे 'रस' बैल' 'वाक्' 'विवर्त' 'आगम' 'साम' आदि।

मूल शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त है उसे अंग्रेजी में वहीं समझा दिया गया है। अतः अन्त में मूल संस्कृत शब्दों का अंग्रेजी में समझाते हुए Glossary परिशिष्ट में दी गई है जो सभी के लिए हितकर सिद्ध होगी। अस्तु।

**विज्ञान** - आज सृष्टि के उद्गम और विकास के बारे में वैज्ञानिकों की जो स्थापनाएँ एवं धारणाएँ हैं उन्हें लेकर भारतीय चिन्तन में उनका उत्स बताने की अनेक लहरें चल रही हैं यह हम सभी जानते हैं। बिग बैंग थ्योरी से लेकर एक्सपैंडिंग यूनिवर्स अथवा यूनीफाइड फील्ड थ्योरी को भी वेदों में मूल रूप से निहित बताया जाता है। आईन्स्टीन की थ्योरी ऑव रिलेटिविटी को भी। लेखक स्वयं व्यापक अध्ययन का धनी रहा है। अतः इन सभी चिन्तनधाराओं का संकेत अपनी भूमिका में देकर यह कह दिया गया है कि इन सबका समानान्तर चिन्तन जहाँ वेदों में उपलब्ध होता है, उसका संकेत कर दिया जाएगा। इससे चिन्तन की परिपक्वता प्रमाणित होती है। वेदों के, कालनिर्णय के बारे में तथा वेदों की व्याख्या करने के बारे में जहाँ पाश्चात्य विद्वानों की अपरिपक्वता एवं असंगति स्पष्ट है। वहाँ निर्भीक एवं वस्तुनिष्ठ शैली में लेखक ने स्पष्ट कर दिया है कि दुर्भाग्यवश उनकी दिशा ही कुछ और थी अतः उनके निष्कर्ष भी अप्रासंगिक रहे। आज वे स्वतः निरस्त हो गए हैं। वे मजहब को ढूँढ रहे थे जबकि वेदों में मजहब नहीं विज्ञान है।

विज्ञान क्या है इस पर विद्वानों ने अनेक व्युत्पत्तियाँ दी हैं- विशिष्टं ज्ञानं, विरुद्धं ज्ञानं, विविधं ज्ञानं विज्ञानम् आदि। मिश्र जी बड़े सहज ढंग से इसे समझाते हैं-विज्ञान है Variety of Knowledge

and also Knowledge of Variety (xvii) भूमिका में वे न्यूटन, आईन्स्टीन आदि से लेकर वर्तमान स्टीवन हाकिन्स तक के सिद्धान्तों का जिक्र करते हैं, वरिष्ठ पत्रकार तथा अंग्रेजी के शिखर स्तर के लेखक होने के कारण आधुनिकतम वैज्ञानिक स्थापनाओं की जानकारी उन्हें होना स्वाभाविक ही था। अतः वे नवीनतम स्थापनाओं को वेद में खोजने की चकाचौंध में न पड़कर वेदों से लेकर शास्त्रों तक में ज्ञान विज्ञान के जो सिद्धान्त स्थापित हैं उन्हें अंग्रेजी में ओझाजी और मोतीलाल शास्त्री के अभिगम के अनुरूप समझाने का कार्य करते हैं। इस समझाने में उनका अपना मौलिक विवेक अनेक स्थानों पर सर्वोपरि भूमिका अदा करता है। यह ग्रन्थ के गहन विश्लेषण से स्पष्ट हो सकता है।

इस प्रकार यह ग्रन्थ अनेक शास्त्रीय सिद्धान्तों और वेद में संकेतित वैज्ञानिक रहस्यों का (जो सही निर्वचन के अभाव में, दूसरे शब्दों में ठीक तरह से Decode न किये जाने के कारण अनसुलझे रह गये थे)। समग्रीकृत अध्ययन या निष्कर्ष है, Digest है जिसमें प्रत्यायकता है, वह Convincing है क्योंकि वे अंग्रेजी भाषा में सुलझी शैली में प्रस्तुत किये गये है। इसीलिये इसे नाम दिया गया है Re-discovering Ancient Insihghts beyond the Universe of Physics आवश्यकता इस बात की है कि इसमें वर्णित विविध क्षेत्रों के सिद्धान्तों पर उनके मूल पाठों को साथ लेकर शोध और अध्ययन हो, संवाद और विश्लेषण हो जिससे इनका महत्त्व स्पष्ट हो सके।

**मन, प्राण और वाक् –** वेद विज्ञान की जिस धारा को मिश्रजी ने इस ग्रन्थ में विवेचित किया है उसकी कुछ विशेषताएँ अन्य विज्ञान चिन्तन धाराओं से उसे अलग करती हैं। उदाहरणार्थ सामान्य जन के मानस में ऋषि शब्द से जटाजूट धारी या मन्त्रद्रष्टा मनीषी का चित्र उभरता है। और पितरों का अर्थ हमारे दिवंगत पूर्वजों से समझा जाता है। जिनके लिए पिण्डदान आदि होता है। किन्तु सृष्टि प्रक्रिया के विज्ञान चिन्तन में जो मूल तत्त्व सृष्टि का आरम्भ करते हैं। उन्हें प्राण कहा जाता है। प्राण में ज्योंहि पहली गति प्रारम्भ होती है वह ऋषि प्राण कहा जाता है जो एकल या एककल होता है। जब उसमें कोई दूसरी कला संयुक्त हो जाती है वह पितृप्राण कहलाता है। इसी प्रक्रिया से सारी सृष्टि उद्विकसित होती है। फिर देव प्राण उद्विकसित होते हैं फिर असुर, दानव, मानव आदि। यह ओझा जी और पंडित मोतीलाल शास्त्री जी ने विस्तार से समझाया है। इसे प्रारम्भिक अध्याय में मिश्र जी ने स्पष्ट करते हुए संक्षेप में इस रूप में समझा दिया है कि प्राण जिसे सुप्रा फिजिकल इनर्जी (Supraphysical Energy) कहा जा सकता है मूल रूप में ऋषि प्राण हैं (Compound) होते ही पितृप्राण कहलाते हैं। उन्होंने शतपथ ब्राह्मण की वही व्युत्पत्ति उद्धृत भी कर दी है (पृ. 47)। 'ऋषति गच्छति इति ऋषिः'। ज्यों ही गति उत्पन्न हुई (जिसे गायत्री प्राण कहा गया है) ऋषि प्राण स्पन्दित होने लगा। फिर मिश्रित होकर पितृप्राण बना। अंग्रेजी की इन संज्ञाओं से सामान्य पाठक इस सिद्धान्त का आशय समझ जाता है।

इसी प्रकार सृष्टिप्रक्रिया प्रारम्भ होने पर उसके जो घटक हैं उनका विवरण देकर लेखक आज

के पाठक के लिए हृदयंगम होने वाली भाषा में भी उसे समझाता है। सारी सृष्टि के तीन घटक मन, प्राण, वाक् स्पष्ट हैं। उन्हें हजारों वर्षों से वेद, शतपथब्राह्मण आदि अपनी पारिभाषिक संज्ञाओं से समझाते रहे हैं। मिश्रजी. ने वह सारा विवरण देकर सरल रूप में यों समझा दिया है। In this way we encounter three elements or factors in the universe and in every object constituting the universe. We could also describe them as three dimensions of a single object. To summarise, they are : 1 knowledge or awareness; 2 Action, function or motion and 3. Matter of substance. (p. 37)

इस विवरण से मन, प्राण और वाक् की वेदविज्ञान सम्मत परिभाषा सरलता से समझी जा सकती है। वाक् का यहाँ वाणी से कोई लेना देना नहीं है जैसा भाषाविद् सामान्यतः समझते हैं। वेद विज्ञान में वाक् ठीक वही तत्त्व, है जिसे मैटर या सबस्टेंस शब्दों से तत्काल समझा जा . सकता है।

**आगम, रस और बल** - पारिभाषिक संज्ञाओं के अंग्रेजी अनुवाद में सतर्कता बरतना इसलिए भी.. आवश्यक है कि सहस्राब्दियों से संस्कृत भाषा विभिन्न शास्त्रों की विभिन्न अभिव्यक्तियों के लिए शब्द देती आ रही है। बहुधा एक ही शब्द विभिन्न सन्दर्भो में अनेक अर्थ देता है। व्याकरण में संहिता का अर्थ दूसरा है वेद की संहिता बिल्कुल अलग। ऐसा ही एक दिलचस्प उदाहरण मिश्र जी ने दिया है कि संस्कृत के आगम शब्द के लिए अंग्रेजी अनुवाद किस प्रकार विभिन्न होंगे। निगम और आगम में आगम का अर्थ कुछ और है Agama facilitates the gaining of knowledge. In his Sanskrit-English Dictionary (1990), SirMonie Monier-Williams gives the meaning of Agama as Coming near, approaching appearence or reappearance, income lowful acquisition of property, acquisition of knowledge, Science, Collection of such Doctrines, sacred work, anything handed down and fixed by tradition etc. यह तो हुआ हमारा आगम अर्थात् शास्त्र। व्याकरण में आगम और आदेश शब्द बिल्कुल अलग अर्थों में आते हैं। वे भी मिश्र जी ने उद्धृत किये हैं। - Meaningless syllable or letter inserted in any part of the radical word फिर अपनी ओर से आगम की स्पष्ट व्याख्या भी दी है कि किस प्रकार गुरुमुख से विद्या का सम्प्रदाय आगम कहा गया है और यह भी बताया है कि इसके अनुवाद किस प्रकार अलग अलग तरह से किये गये हैं (पृ. 360-61)।

वेद विज्ञान की पारिभाषिक संज्ञाओं में इसी प्रकार के तीन शब्द हैं रस, बल और अभ्व। इन्हें अलग अलग प्रसंगों में बड़े रहस्यात्मक ढंग से समझाया गया है और सामान्य शास्त्र के अर्थों से अलग अर्थों में ये प्रयुक्त होते हैं। अतः इन्हें समझाने के लिए मिश्र जी ने अलग अलग अध्यायों में अनेक पृष्ठ लिखे हैं। वस्तुतः 'सुख' 'आनन्द' और 'रस' पर्याय से लगते हैं किन्तु इन्हें बिल्कुल अलग अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। आनन्द, विज्ञान, मन प्राण और वाक् की पाँच कलाओं वाला आनन्द अलग है। इसे Total Tranquillity utter stillness of the universe आदि शब्दों से समझाया गया है। सुख Plea-

sure है ही सूप्रा फिजिकल एनर्जी की वह स्थिति जिसमें गति नहीं है, रस है, रस में जब शक्ति और गति आती है तब बल उद्भूत होता है बल से वह पदार्थ परिणत होता है जिस अभ्व कहते हैं। From the collision of Balas a new state of supraphysical energy emerges, known as Abhwa. Just as oil comes out of oilsseds or as butter comes from curd so does the latent Bala emerge from Rasa to in another way, which Balas merge or clash with each other a new individual arises and this is Abhwa.

**आभु और अभ्व –** आभु और अभ्व इसी प्रकार की अल्पज्ञात किन्तु विज्ञान और दर्शन में प्रयुक्त संज्ञाएँ हैं जिनका विवरण मिश्रजी ने स्थान-स्थान पर दिया है। पं. मधुसूदन ओझा ने संशयतदुच्छेदवाद में आभु और अभ्व को समझाने के लिए उपजाति छन्द में अनेक पद्य लिखे हैं–

**दिग्देशकालैरभितं तु यत्तज्ज्ञानं हितद् द्रष्ट्र तदाभुविद्यात्।**
**आनन्द आदावथ चेतनान्या सत्तातृतीयेति तदाभुरूपम्।**
**तत्कर्मतदूपमथास्यनामेत्येतत् त्रयं त्वभ्वमिति ब्रुवन्ति।**

ज्ञान जो ज्ञाता है आभु है, ज्ञेय जो कर्म है, पदार्थ है अभ्व है। ज्ञान (अमूर्त) है, दिक् देश काल में बंधा (दृश्य) नहीं है किन्तु पदार्थ, कर्म दृश्य हैं। ज्ञान आभु है ज्ञेय अभ्व है इसी गुत्थी को मिश्र जी ने बड़े सरल ढंग से समझाया है। Brahman (ब्रह्म) is of to kinds Abhu and Abhwa the one who sees (The seer) is called Abhu and that which is seen (The seer) is Abhwa. संशयतदुच्छेदवाद उस समय अल्पज्ञात था। मोतीलाल शास्त्री कभी कभी अपने व्याख्यानों में उसकी चर्चा करते थे। यहाँ मिश्र जी ने उसका कथ्य संक्षेप में समाहित कर दिया।

**ब्रह्म वस्तुस्थिति और रहस्य –** आज सामान्यतः भारतीय चिन्तन में सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन करने वाली जो अवधारणाएँ हैं वे उपनिषदों में वर्णित सृष्टि प्रक्रिया चिन्तन अथवा गीता और मनु द्वारा वर्णित प्रक्रिया विवरण से जन्मी है। औपनिषद चिन्तन एक उसी परम सत्ता से सृष्टि का उद्भव मानता है जिसे ब्रह्म कह लें या किसी और नाम से बतायें। जो मूलतः चिद्रूप हैं आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, फिर अग्नि फिर जल फिर पृथ्वी। तस्माद्वा एतस्मादात्मन् आकाशः सम्भूतः, आकाशात् वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वी' तैत्तिरीयोपनिषद् (2/1/1) की प्रसिद्ध उक्ति है। मनु भी कहते हैं –

**अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्।**

यह सृष्टि प्रक्रिया स्वयंभू भगवान् ने प्रारंभ की।

उपनिषदों से पूर्ववर्ती वेदों का चिन्तन कुछ विभिन्न था। वेदों में सृष्टि प्रक्रिया अनेक सूक्तों में विस्तार से वर्णित है। जिनमें नासदीय सूक्त, अस्यवामीय सूक्त आदि प्रसिद्ध हैं। एक वर्ग इन्हें 'भावसूक्त' कहकर पुकारता है। भाव अर्थात् सृष्टि। नासदीयसूक्त कहता है 'नासदासीन्नो सदासीत्तदानीम्' जब कुछ

भी नहीं था तब क्या था? न असत् था न सत् था। यह क्या था इस पर जो चिन्तन हुआ उसके आधार पर पं. मधुसूदन ओझा ने दश वादों की उद्भावना की। यह सुविदित है पहले केवल अन्धकार था इस पर तमोवाद बना। केवल जल था इस पर अम्भोवाद।

इस प्रकार दशवाद रहस्य लिखे गये किन्तु जो चिन्तन दर्शन प्रस्थान में उद्भूत था उसे नकारना किसी विद्वान् के वश की बात नहीं थी। अतः अन्ततोगत्वा यह कह दिया गया कि ब्रह्मवाद या ब्रह्मसिद्धान्त ही ओझा जी का सिद्धान्तपक्ष है यह सब जानते हैं। हम सबको यह सप्रणति मान्य कर ही लेना चाहिए।

यहाँ केवल वस्तुस्थिति ज्यों की त्यों रखने की दृष्टि से यह उल्लेख नहीं होगा कि पाश्चात्त्य एवं नवीन शोधकर्ताओं का एकमत यह है कि ब्रह्मवाद या एकमात्र सत्ता ब्रह्म की मानने वाली अवधारणा संहिताकाल में नहीं थी। वेदों में ब्रह्मन् शब्द उस परम सत्ता के वाचक के रूप में है ही नहीं जो वेदान्त ने स्थापित की थी। यह परवर्ती काल अर्थात् संहितोत्तरकाल में उपनिषद् की देन है, आरण्यकों से शुरू होता है। सनातनी भक्तिकाल के शिखर विद्वान् इसका विरोध करते हैं कि यह सब पाश्चात्यों का बहकावा है। ब्रह्म तो पहले से ही था। इसका एक दिलचस्प प्रसंग इस प्रकार उद्धृत किया जाता है कि ऋग्वेद के. विश्वकर्मा सूक्त में सृष्टि विद्या की आधारभूत पहेली वेद इस प्रकार प्रस्तुत करता है।

**किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।**
**मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद् यद्ध्यतिष्ठत भुवनानि धारयन्।।** (ऋ. 10/81/4)

बड़ा मासूम सा सवाल है यह पृथिवी आकाश सारा ब्रह्माण्ड कैसे बन गया, किसने तराशा इसे? किस जंगल से वह पेड़ आया जिससे सारी दुनियाँ का महल गढ़ दिया गया?

इसके उत्तर में संहिताओं में तो कहीं यह नहीं लिखा कि परब्रह्म ने यह सब किया किन्तु हम शंकराचार्य के अमरथाती के बारिस तो सदियों से मानते हैं कि परम सत्ता ब्रह्म ही है उसी की यह सृष्टि है हमें तो यह कहीं से खोजना ही था कि ब्रह्म का ही यह खेल हैं। वेद तो यों कहता है–

**किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित् कथासीत्।**
**यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्मा विद्यामौर्णोत् महिना विश्वचक्षाः।।** (ऋ. 10/41)

विश्वनिर्माता ने सारे पदार्थों को इस भूमि को न जाने किस अधिष्ठान से, किस औजार से बना डाला, वेद यह भी कहता है ''यो यस्याध्यक्षः परमेव्योमन् सोऽङ्गवेद यद्वा न वेद'' सबसे पहले कौन था। यह कोई नहीं जानता, वह भी नहीं जो इसका मालिक है। यद्यपि वेद यह भी कहता है कि सर्वप्रथम ब्रह्म पैदा हुआ (ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्) किन्तु कर्मकाण्ड में उसका कुछ और अर्थ बतलाया जाता है। जबसे वेदान्त चिन्तन आरम्भ हुआ है और एक अमूर्त चिन्मय परम सत्ता ही परा विद्या द्वारा गम्य मानी गई है वही जगत् सृष्टि का मूल है यह घण्टाघोष हुआ, तब से ब्रह्म सब व्याप्त हो गया, ब्रह्म विद्या परा विद्या हो गई। यहीं पं. मधुसूदन ओझा के दशवाद रहस्य कथन का ब्रह्मसिद्धान्त को

सिद्धान्त पक्ष के रूप में स्थापित करने का रहस्य है। इस सबका मूल निर्णायक वचन तत्त्वदर्शी सनातनियों को संहिता में न मिला है मिला है तो समझा न गया है किन्तु तैत्तिरीयब्राह्मण में अवश्य मिल गया। सन्तुलन की दृष्टि से विवेकीजन उसे ही यों उद्धृत करते हैं।

**ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आसीत् यतो द्यापृथिवी निष्टतक्षुः।**
**मनीषिणो मनसा वि ब्रवीमि वो ब्रह्माध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन्।।**

(तैत्तिरीयब्राह्मण 2/8/9/7)

**प्रजापति –** यह ब्रह्मविद्या परमवन्दनीय है। अमूल्य है गीता भी ''ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे'' कहकर उसे चरम प्राप्तव्य मानती है किन्तु वेदों में सृष्टि के प्रक्रिया का जो वैज्ञानिक विवेचन है वह जिस संज्ञा को आधार मानकर चलता है वह है 'प्रजापति'। जब कुछ भी नहीं था तब कौन सा तत्त्व था इस पर बहस न करें तो यह वेदों में स्पष्ट किया गया है कि जब कुछ होने लगा तो उसे प्रारम्भ करने वाला प्रजापति ही था। पंडित मधुसूदन ओझा और पं. मोतीलाल शास्त्री द्वारा विवेचित सृष्टि विद्या का आधार भी यही प्रजाति है। जिन आदिम तत्त्वों से सारी सृष्टि होती है वे इसी प्रजापति के अंश हैं। यही वह षोडशी, पुरुष है जिसके सोलह तत्त्वों के विवेचन में सारी सृष्टि की विद्या और अविद्या समाहित हो जाती है। यही परात्पर निर्विशेष मूलतत्त्व है जिसे आप ब्रह्म कह लें उसके तीन स्वरूप और अंश बाद में प्रकट होते हैं। जिन्हें अवयव, अक्षर और क्षर कहा जाता है। प्रत्येक की पाँच पाँच कलायें बतलायी जाती है। इन कलाओं में ही आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण, वाक् अव्यय की, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, अग्नि, सोम, अक्षर की, मन, प्राण, वाक्, अन्न, अन्नाद्, क्षर की 15 कलायें आ जाती हैं। ये 15 और एक निर्विशेष, इस प्रकार 16 कलाओं का षोडशी पुरुष वेदों का प्रजापति हो जाता है। उपनिषदों का ब्रह्म। यह समन्वय सदियों से हमारा अभिगम कर रहा है यही हमारी सनातनता है जिसमें सारे पक्ष समाहित हो जाते हैं। वेद भी तो यही कहता है–

**यस्माज्जातो न परो अन्यो अस्ति य आबभूव भुवनानि विश्वा।**
**प्रजापतिः प्रजया संबैराणस्त्रीणि ज्योतींषि स च ते स षोडशी।।**

यह वेद का षोडशी प्रजापति किस प्रकार उपनिषदों के षोडशकल ब्रह्म के रूप में समझा जा सकता है। यही प्रमुख आधार भित्ति है ओझा जी के, म.म. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी के, मोतीलाल शास्त्री के वाङ्मय में प्रतिपादित वेदविज्ञान की जिसमें वेद, उपनिषद्, पुराण आदि ही नहीं, गीता के सिद्धान्तों का भी समुचित समन्वय हो जाता है। ओझा जी के ब्रह्मविज्ञान, ब्रह्मसिद्धान्त, महर्षिकुलवैभवम् आदि अनेक ग्रन्थों में गिरिधर शर्मा जी के ''वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति'' आदि ग्रन्थों में मोतीलाल जी के समस्त वाङ्मय में विशेषकर राष्ट्रपति भवन में 1956 में दिये गये पाँच व्याख्यानों में यह विशाल समन्वय दृष्टि

इतनी स्पष्ट और प्रमुख है जो हमारे सहस्राब्दियों के विविध शास्त्रान्तर्गत सिद्धान्तों को एक सूत्र में बाँध देती है।

इस पृष्ठभूमि में यह देखना दिलचस्प होगा कि श्रीऋषिकुमार मिश्र ने ''विफोर द बिगिनिंग'' किस प्रकार की सत्ता बतलायी है। मिश्र जी ने अपने ग्रन्थ में छहो दर्शनों की विषय वस्तु का विवरण पृथक् खण्डों में दिया है (जैसे 19वाँ अध्याय) वे दर्शन प्रस्थानों से परिचित हैं। शंकराचार्य की देन का वर्णन करते हैं, वेदान्त की दृष्टि से भी जो जानकारी पाठक को आवश्यक है वह (तीसरे खण्ड) चौथे अध्याय में जीव, ईश्वर और परमेश्वर शीर्षक से केवल संकेतित होकर (पाँचवें खण्ड) चौदहवें अध्याय में विस्तार से वर्णित है। जिसमें योगदर्शन के सिद्धान्त और उपनिषदों की विषय वस्तु आ गयी है। किन्तु सृष्टि प्रक्रिया के लिये वे वेद विज्ञान के प्रजापति वाले सिद्धान्त पर आधारित विवरण ही देते हैं। दशवादों के प्रपञ्च में न पड़कर प्रजापति की विविध भूमिकाओं को ही साष्ट कर देते हैं। यद्यपि वे जानते हैं कि ये दशवाद का है क्योंकि अम्भोवाद का उन्होंने एक स्थान पर संकेत किया है (पृ. 99) यह उनकी बौद्धिक वस्तुनिष्ठता का एक निदर्शन है।

तीसरा अध्याय प्रजापति के विवेचन को ही समर्पित है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि वेदों में प्रजापति द्वारा समस्त सृष्टि के उद्भव का सिद्धान्त ही प्रतिपादित है। उस प्रजापति के ही ये विभिन्न स्वरूप है जो सृष्टि के कारक बनते हैं। "Prajapati the first individual" के नारे के साथ लेखक का कथन है कि प्राण, मन और वाक् प्रजापति में प्रतिष्ठित हैं। इनकी परस्पर अन्तःक्रिया से सृष्टि हेती है यह विस्तार से इस अध्याय में वर्णित है। बड़े रहस्यात्मक ढंग से इस सिद्धान्त को इस प्रकार अभिहित किया गया है।

"Prajapti is the first Supraphysical 'individual to evolve from the three realities, or Supraphysical forces, of Mana, Prana and Wak. As a result, it is never seen without these three. Every individual in this universe, from the very largest to the tiniest, is a Prajapati and innumerable Prajapatis together constitute a universe (P. 53)" इस प्रसंग में प्रजापति के विभिन्न आयामों का नाभि, मूर्ति और महिमा नाम से वर्णन भी है।

इस प्रकार वेद विज्ञान के अपने विशिष्ट सिद्धान्त जो दर्शनों में या पुराणों में उस रूप में नहीं मिलते अपनी विज्ञानवादी गुरुपरम्परा के अनुरूप लेखक ने इसमें वैचारिक शैली की भाषा के साथ समाहित कर दिया है। मुझे ये देखकर अवश्य आश्चर्य हुआ कि कुछ अध्याय उन विषयों पर भी हैं जिनका वेद विज्ञान के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं है। वे तन्त्रशास्त्र या पुराण के विषय है। जैसे 11वाँ अध्याय तन्त्रशास्त्र से सम्बद्ध त्रिपुरा रहस्य पर है जिसमें पौराणिक कथा का आधार लिया गया है। यद्यपि उसके साथ ब्रह्माण्ड पर चिन्तन "The universe as a dream" भी समाविष्ट है। तथा 12वाँ अध्याय विष्णुसहस्रनाम

पर है। जिसमें महाभारत में भीष्मोक्त विष्णु के सहस्रनामों की व्युत्पत्ति, महिमा और प्रासङ्गिकता स्पष्ट की गयी है। वेद विज्ञान से सम्बद्ध न होने पर भी इन दोनों विषयों का हमारे वाङ्मय चिन्तन में जो महत्त्व है वह निर्विवाद है इसलिए इन दोनों अध्यायों का अपना विशिष्ट महत्त्व है।

**विष्णु –** इसके ठीक बाद वह अध्याय आ जाता है जिसमें वेद विज्ञान की परिधि में विष्णु का एक निराला वैज्ञानिक महत्त्व प्रतिपादित है। जिसका उल्लेख न तो पुराणों में है न दर्शन में। वेदों में विष्णु की विशिष्ट महिमा वर्णित है। सूर्य का एक आयाम भी विष्णु के नाम से अभिहित है तथा इन्द्र तथा विष्णु का जोड़ा ब्रह्माण्ड में जो विशिष्ट भूमिका निभाता है उसका एक रोमाञ्चकारी सिद्धान्त भी प्रतिपादित है जो आज के विज्ञान में भी ठीक उसी प्रकार मान्य है जैसे वेदों में बताया गया है। 'इन्द्राविष्णू' का जोड़ा ठीक उसी प्रकार एक वैज्ञानिक क्रिया का प्रतीक है जिस प्रकार इन्द्र और वरुण की गति, पृथिवी की गति आदि के आधार पर गोलार्ध को अथवा दिन रात को नियमित करने वाली शक्ति बतायी जाती है। पृथिवी की आकर्षण शक्ति तो सभी को विदित है किन्तु ब्रह्माण्ड में स्थित जो आकर्षण शक्ति है जिसके द्वारा सारे ग्रह अपनी कक्षाओं में रहते हैं या घूमते हैं। वह विष्णु की देन है। यह वेद विज्ञान की अवधारणा है जो पुराणों में चाहे नहीं बतलायी गयी, वैज्ञानिक साहित्य में बतलायी गयी है। 'विष्णुना विधृते भूमी इति वत्सस्य वेदना'' इत्यादि तैत्तिरीयारण्यक के उद्धरण म.म. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी अपने ग्रन्थों में और व्याख्यानों में बहुधा देते रहे हैं।

इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ या ऊर्जा को अपनी ओर खींचने वाली जो शक्ति है वह वेद विज्ञान में विष्णु है। ठीक इसके विपरीत एक विकर्षणशक्ति भी होती है जो पदार्थ या ऊर्जा को खींचने के बजाय फेंकती है। आज का विज्ञान का छोटे से छोटा छात्र इन शक्तियों को Centripetal Force or Centrifugal Force के नाम से जानता है। इनका अनुवाद भी क्रमशः अभिकेन्द्रक बल अथवा आकर्षण शक्ति और अपकेन्द्रक बल अथवा विकर्षण शक्ति नाम से सुप्रचलित है। ठीक ये ही क्रियायें क्रमशः विष्णु और इन्द्र अर्थात् इन्द्राविष्णू का जोड़ा वेदविज्ञान में कर्ता बताया जाता है कि इन्द्र हर वस्तु को बाहर फेंकता है, विष्णु अपनी ओर खींचता है। इसके प्रतीकात्मक वर्णन सर्वत्र उपलब्ध हैं। इस पर मिश्र जी ने पृथक् 13वाँ अध्याय लिखा है। "Indra and Vishnu two warring Gods" इसमें इन दोनों की यही क्रियाएँ ब्रह्माण्ड में होती बतलायी गयी हैं। आकर्षणशक्ति और विकर्षणशक्ति का नाम न देकर Centripetal और Contifugal अभिकेन्द्रक और अपकेन्द्रक बल नाम भी न देकर (क्योंकि शायद लेखक का यह मानस था कि अन्य आम संज्ञाओं से वेद विज्ञान की इन व्यापक अवधारणाओं को सीमित करना उचित नहीं होगा क्योंकि इन्द्र के 14 प्रकार तथा अन्य आयाम भी लेखक द्वारा वर्णित हैं।) इन्हें लेखक ने यों स्पष्ट किया है- "Motion falls into the two categories of inflow and outflow (of energy) and as we have pointed out above, the inflow is Vishnu and the outflow is Indra (P. 290)" लेखक ने

वेदविज्ञान, प्राणविद्या, सृष्टिविद्या, ज्ञानमीमांसा, सत्तामीमांसा, प्रमाणमीमांसा आदि विभिन्न शाखाओं के तत्त्वों को 9 खण्डों और 21 अध्यायों में वेद, उपनिषद्, पुराण, शास्त्र आदि के सन्दर्भो के साथ इस प्रकार वर्णित किया है कि यह ग्रन्थ विश्वकोषीय प्रकृति का आकर ग्रन्थ लगने लगता है। इन सबके अतिरिक्त हमारी कल्पों और मन्वन्तरों तथा चतुर्युगियों की कालगणना बड़ी स्पष्टता के साथ विस्तार से समझायी गयी है जो इस ग्रन्थ की प्रमुख विशेषता है। अन्त में कुछ उद्धरण उन विद्वानों की मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करने हेतु दिये गये हैं जो पाश्चात्यों की इस मान्यता का सप्रमाण खण्डन करते हैं कि आर्य बाहर से आये थे, आक्रान्त थे आदि। इनमें प्रमुख हैं डेविड फ्राउले और नवरख एस. रामराज जो सरस्वती नदी के इतिहास के पुनरुद्धार के पुरोधा माने जाते हैं और जिनके कारण सिन्धु घाटी सभ्यता कालीन भारत के प्राचीन इतिहास के उस अध्याय को सरस्वती सभ्यता या सिन्धु सरस्वती सभ्यता के नाम से पुकारा जाने लगा है।

इन संकेतों से स्पष्ट हो गया होगा कि ऋषिकुमार मिश्र जी के इस ग्रन्थ ने किस व्यापक फलक पर वेदान्त विज्ञान, औपनिषद् चिन्तन और नवीनतम वैज्ञानिक अवधारणाओं का सुसमन्वित प्रस्तुतीकरण कर भारतीय तत्त्वचिन्तन का एक ज्ञानकोष हमें दिया है।

अध्यक्ष, आधुनिक संस्कृत पीठ, ज.रा. राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय,
प्रधान सम्पादक 'भारती' संस्कृत मासिक,
पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत अकादमी तथा
निदेशक संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार,
मञ्जु निकुञ्ज, सी/8 पृथिवीराज रोड, सी-स्कीम, जयपुर, 302001